International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 5; September 2018; Page No. 98-100

हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 कंचनलता सिंह
प्रोफेसर, स्वतंत्र गर्ल्स डिग्री कालेज, लखनऊ विश्व विद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश
वस्तुतः मनुष्य सौन्दर्योपासक प्राणी है। सौन्दर्योपासना द्वारा हम सुन्दर वस्तु के अस्तित्व को सार्थक कर अपनी ओर सम्पूर्ण विश्व के एकत्व की स्थापना करते है। सौन्दर्योपासना ही विश्वव्यापी उपासना का मूल है। जिसके द्वारा मानव उस सौन्दर्य की झलक प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है जिससे समस्त विश्व की रमणीय वस्तुओं की मनोहारणी सुन्दरता प्राप्त होती है तथा समष्टि और व्यष्टि के आदर्शों का मेल हो जाता है।

मूल शब्द : प्रकृति, सौन्दर्य, वैदिक साहित्य, मध्यकालीन, भक्तिकाल, रीतिकाल।

प्रस्तावना
विविध प्राकृतिक दृश्यों के चित्रण द्वारा कवियों ने समष्टि के आदर्श के साथ व्यष्टि के आदर्श की भी समानता दिखलायी है, चूंकि आलौकिक सौन्दर्य दृष्टि ही कवि प्रतिभा का मूल तत्व मानी जाती है। अतः कवियों ने बाह्य जगत, आभ्यान्तिरक जगत, बौद्धिक जगत और आध्यात्मिक जगत के सौन्दर्य के मनोरम झांकी अपनी कृतियों में प्रस्तुत की है। वायरन ने उचित ही लिखा है –

> 'मैं मनुष्य से कम प्यार नहीं करता पर प्रकृति से अधिक प्यार करता हूँ।'

यदि सौन्दर्य भावना मानस परक है तो प्रकृति सौन्दर्य मानव की कलात्मक दृष्टि का परिणाम है। क्रोशे के शब्दों में 'प्रकृति उसी व्यक्ति के लिए सुन्दर है जो उसे कलाकार की दृष्टि से देखता है।' एस0 अलेक्जेण्डर का भी यहीं विचार है कि 'प्रकृति तभी मनोहारिणी प्रतीत होती है जबकि हम उसे कलाकार की दृष्टि से देखते है।' वास्तव में कलाकार और साधारण दोनों ही व्यक्ति में सौन्दर्यानुभूति की क्षमता विद्यमान रहती है परन्तु कलाकार अपनी व्यापक दृष्टि और प्रत्यक्ष ग्रहण की शक्ति के कारण अपनी अभिव्यक्ति के प्रेरणा शक्ति के द्वारा प्रकृति के व्यापक विस्तार से विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों का चयन कर अपनी सौन्दर्यानुभूति के योग से उनका मम् स्पर्शी चित्रण करता है।

विवेचना
वस्तुतः प्रकृति सौन्दर्य के प्रति उपेक्षा दिखाना, सृष्टि निर्माता ईश्वर के प्रति उपेक्षा प्रकट करना है। प्रकृति सौन्दर्य दर्शन से स्वाभाविक ही मन आनन्द विकृवल हो उठता है। प्रभात, मध्यान, संध्या, सर्बती, नपनाख्य, कौमुदी, विभात, नक्षत्र मण्डित व्योम मण्डल, सूर चाप रंचि विद्युत घोष, सुमधुर पवन संचार, सुमधुर नादि, सुन्दर मेघमाला, विकसित वृक्ष, पुष्पित लतायें, शारदीय पूर्णिमा का चंद्र, सुरभित सुमन, सम्पत्ति वाले तरू, भ्रमर, स्पष्ट मुकुल, स्फुटोन्मुख किसलय, छायामय कुंजवन, सुखमय उपवन, निविड़ अरण्य, उत्ताल जलनिधि, संध्या कालि सूर्य की उर्जिमा, नदी का निर्मल जल, हिम तुषार, मधुमय पराग, निराद का वारि और तरंगमय सरोवर आदि में सौन्दर्य से किसका मन प्रफुल्लित नहीं हो उठता।

प्रकृति तो मानव की आदिम सहचरी ही है तथा आदिकाल के प्रथम पुरूष ने जब अपने चक्षुपटल खोले होंगे तब उसको सर्वप्रथम प्रकृति की अनूठी छवि ही दृष्टिगोचर हुई होगी। वैज्ञानिक का विकासवाद और धर्मग्रन्थों की सृष्टि कल्पना दोनों ही इस विषय में एक मत है कि प्रकृति के विशाल क्रोड में मानव ने जन्म लिया है। प्रकृति के सहयोग से ही अपनी चेतना को विकसित किया है। प्राचीन से लेकर अर्वाचीन कवियों तक सभी ने प्रकृति के सुन्दर विराट और भयंकर रूपों का विशद वर्णन किया है।

प्रकृति चित्र की विभिन्न पद्धतियाँ
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कहना है 'अनन्त रूपों में प्रकृति हमारे सामने आती है, कहीं मधुर सुसज्जित या सुंदर रूप में, कहीं सूखे बेडौल या ककर्श रूप में, कहीं मत्त, विशाल या विचित्र रूप में, कहीं उग्र काल या भयंकर रूप में।'
अतः काव्य में प्रकृति की विभिन्न प्रणालियाँ प्रचलित हैं। जिसका हमारे समीक्षकों ने उल्लेख किया है –

1. आलम्बन रूप में – इसमें पाठक को साक्षात् प्रकृति के दर्शन का आनंद प्राप्त होता है क्योंकि कवि प्रकृति का स्वतंत्र रूप से चित्रण करता है।
2. इसमें प्रकृति भावनाओं को उद्दीप्त करने में सहायक होती है। चांदनी रात को देख वियोगियों का दुःख और बढ़ जाता है।
3. अलंकार या अलंकृत रूप – इसमें अलंकारों का सहारा लेकर प्रकृति का वर्णन किया जाता है।
4. मानवीकरण रूप – जब प्रकृति को सजीव रूप में उपस्थित कर उसे मानवीय रूप प्रदान किया जाता है तब उसे मानवीकरण रूप कहते है।
5. प्रतीक – जब कवि अपने भावों को स्पष्ट रू॰ में न कह कर उन्हें प्रतीकों के माध्यम से व्यंजित करता है। जैसे – सुःख के लिए दिन और दुःख के लिए अंधकार का प्रयोग करता है।
6. नीति और उपदेश का माध्यम – इसमें नीति और उपदेश के रूप में प्रकृति का वर्णन होता है।

वैदिक साहित्य में प्रकृति वर्णन
वैदिक साहित्य का विश्व का प्राचीनतम् साहित्य कहा जाता है। सबसे प्राचीन ऋग्वेद से ही हमें प्रकृति चित्रण की सुदृण परम्परा

प्राप्त होती है। ऋग्वेद में ऊषा, मरूत, वरूण, सूर्य, चन्द्र, गिरि, सरिता और वन–उपवन आदि के अनुपम चित्र मिलते हैं। वैदिक ऋषियों को अपनी आत्मा की निर्मलता में बाह्य प्रकृति के कण–कण में अजस्त्र मंगल वर्षा की अनुभूति हुई है।

'मधुबाला ऋतायते मधु क्षारक्ति सिन्धवः। माधवीर्नः सन्त्वोषधीः।
मधुनक्त मुतोषसो मधुयत्पार्णिवं रजः। मधुद्यौरस्तु नः पिता।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमां अस्तु सूर्यः। माध्वीर्भावो भवन्तु नः।'

वैदिक वाड़मय के अन्य ग्रन्थ ब्राह्मण, उपनिषद और आरण्यक में भी प्रकृति के प्रतीक, अलंकार और रहस्यात्मक रूपों की भरमार सी है। बाद में संस्कृत महाकाव्यों में पुनः प्रकृति का ग्रहण अपेक्षाकृत अधिक व्यापक रूप में हुआ। वाल्मीकि रामायेण में हेमन्त ऋतु का यह वर्णन दर्शनीय है –

"अवश्यानिपातेन किंचितप्रम्लिन्न शाद्वला।
बनानां शोभते भूमिनिर्दिष्ट तरूणातया।।
स्पृशन्तु विपुलं शीतमुदके द्विरदः सुखम्।
अत्यंत तृषितो वन्यः प्रतिसंहरते करम्।। "

अर्थात् ओस बिन्दुओं से भीगी हुई हरी घास से युक्त वनभूमि प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के पड़ने पर सुशोभित होती है। यह अत्यंत प्यासा जंगली हाथी अत्यंत शीतल जल के छूते ही अपनी सूड़ को समेट लेता है।

कालांतर में संस्कृत साहित्यकारों ने अपनी कृतियों में विपुल मात्रा में चित्रण किया है। प्रकृति–चित्रण का कदाचित् ही कोई ऐसा रूप होगा जो संस्कृत साहित्य में उपलब्ध नहीं होगा।

पाली, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में भी प्रकृति को भी प्रायः वहीं स्थान प्राप्त हुआ है जो संस्कृत साहित्य में है। सामान्यतया प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में तो विशुद्ध प्रकृति वर्णन की प्रसंग विद्यमान है तथा इन दोनों भाषाओं में संस्कृत के सदृश अलंकृत और प्रतीक प्रजातियों का भी प्रयोग हुआ है।

हिन्दी साहित्य का प्रारम्भिक काल आदिकाल व वीरगाथा काल कहलाता है और उस समय कविता बाह्य निरूपण ही रही तथा प्रकृति का उपयोग केवल अप्रस्तुत विधान के अन्तर्गत हुआ।

रासों ग्रन्थ में प्रकृतिक चित्रण बहुधा उद्दीपन और आलंकारिक रूप में ही उपलब्ध होता है –

कुटिल केस सुदेस पोह, परिचियद पिक्कसद।
कमलगंध, वयसंध, हंसगति चलति मंदगद।।
सेत वस्त्र सोहै सरीर नवस्वाति बुंद जस।
भ्रमर भवहि भुल्लहि सुभाव, मकरन्द बासरस।।

मैथिल कोकिल विद्यापति की पदावली में अवश्य प्रकृति के सुमधुर चित्र दिखाई पड़ते हैं और उनके बसंत आदि के वर्णन में अवश्य कुछ नवीनता है –

सरस बसंत समय भल पावलि दछिन पवन बह धीरे।
सपनहु रूप वचन इक भाखिय मुखि ते दूरि करू चीरे।।

पूर्व मध्यकालीन हिन्दी काव्य को भक्ति काव्य भी कहा जाता है। हिन्दी साहित्य भक्तिकाल निर्गुणधारा और सगुण धारा नामक दो भागों में विभाजित किया जाता है। निर्गुण धारा की ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी नामक धाराओं में विभाषित है। ज्ञानाश्रयी शाखा के कबीर, रैदास, नानक, सुन्दर और दादू आदि संत कवियों ने प्रकृति का प्रयोग मुख्यतया नीति व उपेदश अलंकार रहस्यऔर प्रतीक के रूप में ही किया है। आध्यात्मिक प्रेम का वर्णन करते हुए कहीं प्रकृति के उद्दीपन रूप का चित्रण हुआ है –

'दौ लागो सादर जल्या, पंथी बैठे आइ।
दाधी देह न पालवै, सतगुरू मया लगाय।।'

प्रेमाश्रयी शाखा में प्रकृति का अवश्य महत्व प्राप्त है। इस शाखा के प्रतिनिधि कवि मलिक मोहम्मद जायसी के पद्मावत में प्रकृति के कई रूपों का प्रयोग किया गया है। सामान्यतया जाससी प्रकृति वर्णन की उद्दीपन प्रणाली को अधिक अपनाया है।

'प्रथम बसंत ऋतु आई। सुऋतु चैत बैसाख सोहाई।।
चंदन चीर पहिरि धनि अंगा। सेंदूर दीन विहाँसि भरि गंगा।।
कुसुमहार औ परिमल बासू। मलयागिरि छिरका कबि लासू।।
सौर सुपैती फूलन डासी। धनि औ कंत मिलै सुख रासी।।'

भक्तिकाल की सगुण धारा को रामचरित शाखा और कृष्ण भक्ति शाखा नामक दो उपविभागों में बाँटा गया है। इस धारा के प्रमुख सभी कवियों ने प्रकृति–चित्रण के प्रायः सभी प्रणालियों को अपनाया है। कृष्ण भक्ति काव्य शाखा के कवियों का काव्य प्रकृति वैभव से सम्पन्न जान पड़ता है। कृष्ण भक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि सूर को तो प्रकृति का कुशल चितेरा माना जाता है। कुछ विद्वान तो कहते है कि 'हिन्दी काव्य में प्रकृति का पहला विशद वर्णन सूर काव्य में मिलता है।' सूरदास का 'देखिमत कालिंदी अति कारी' नामक पद मानवीकरण का श्रेष्ठ उदाहरण है इसी प्रकार रहस्यनुभूति विषयक प्रकृति चित्रण भी सूरदास में दृष्टिगोचर होता है –

चलि सखि, तिहि सरोवर जाहिं।
जिहिं सरोवर कमल कमला रवि बिना बिक साहिं,
सघन गुंजन बैठि उनपर भौंरहू बिरमाहि।।

राम भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास के काव्य ग्रन्थों में भी प्रकृति–चित्रण की विभिन्न प्रणालियों का प्रयोग हुआ है लेकिन उन्होंने रामभावना से शून्य प्रकृति का ग्रहण नहीं किया है क्योंकि उनका स्पष्ट मत यहीं है कि राम के दरस–परस के कारण ही प्रकृति उल्लसित है –

'देखे राम पथिक नाचत मुदित मोर।
कें पै कलाप बर बरहिं किरावत, गावत कल कोकिल किशोर।।
.....
तुलसी मुनि खग मृगनि सराहत, भए हैं सुकृति सव इनकी ओर।।'

कहीं–कहीं तुलसी ने प्रकृति का स्वतंत्र निरीक्षण भी किया है औन उनकी दृष्टि साधारण जीव–जन्तुओं पर भी गयी है। उन्होंने 'गीतावली' में पेड़–पौधों, पशु–पक्षियों और जलाशय आदि का भी विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। प्रकृति को उपदेशिका के रूप में चित्रित करने में तुलसी को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

उत्तर मध्यकाल हिन्दी का रीतिकाव्य कहा जाता है और रीतिकाव्य में प्रकृति मुख्यतः उद्दीपन और अलंकारों के लिए ही प्रयुक्त हुई है। रीतिकाल के अधिकांश कवि प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता के प्रति उदासीन थे।

अतः सेनापति, बिहारी, देव, घनानन्द आदि गिने कवियों की कतिपय उक्तियों में ही प्रकृति के स्वाभाविक चित्र मिलते है, देव का यह छन्द दर्शनीय है –

डाल हुय पलना, बिछौना नव पल्लव के,
सुमन झंगूला सोहै, तन छबि भारी दै,
.....
प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै।।

अलंकरण रीतिकाल की एक प्रमुख प्रकृति है। अलंकारोंके अधिकांश उपमान प्रकृति कोष से ग्रहण किये गये है। नायक–नायिका के प्रत्येक अंग के लिए प्रकृति का कोना–कोना छान लिया गया है। आँखों के लिए 'कमल', नाक के लिए 'शुक', दाँतों के लिए 'दाड़िम', बांहों के लिए मृणाल, जाँघों के लिए कदली स्तम्भ, वेणी के लिए सर्प और चाल के लिए गज को देखकर यह स्पष्ट होता है कि अलंकरण की दृष्टि से लोगों ने प्रकृति के खजाने से ही लाभ उठाया है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य का प्रथम चरण 'भारतेन्दु युग' कहलाता है। डॉ0 रामेश्वर लाल खाण्डेलवाल के अनुसार 'प्रकृति प्रेम और प्रकृति चित्रण की दृष्टि से हम भारतेन्दु युग से हिन्दी कविता का एक नवींन पटल उधड़ता हुआ देखते है पर स्वयं भारतेन्दु का अधिकांश प्रकृति–चित्रण अलंकार प्रधान ही है। उनकी यमुना वर्णन और गंगा वर्णन नामक कवितायें दर्शनीय हैं।' पं0 बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' भी प्रकृति के प्रति अपना अनुराग व्यक्त किया है। प्रकृति चित्रण के संदर्भ में आधुनिक हिन्दी कविता में पं0 श्रीधर पाठक का लिया जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के कथानुसार अपने समय के कवियों में प्रकृति का वर्णन पाठक जी ने सबसे अधिक किया। इससे हिन्दी कवियों में वे प्रकृति के एक उपासक कहे जाते थे। उदाहरणार्थ–

'प्रकृति के काल की लालिमा में लसा।
बाल शशि व्योम की ओर था आ रहा।।'

पाठक जी के पश्चात् आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, राय देवी प्रसाद 'पूर्ण', सत्य नारायण कवि रत्न, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त और राम नरेश त्रिपाठी आदि कवियों की काव्य कृतियों में प्रकृति के प्रति सच्चा अनुराग दिखाई पड़ता है।

प्रकृति को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान छायावादी काव्य में ही प्राप्त हुआ। छायावादी कविता प्रकृति चित्रण में युगांतर प्रस्तुत करती है। प्रकृति से छायावादी कवि को इतना राग है कि वह किसी सुनयना के बाल–जाल में अपना लोचन नहीं उलझाना चाहता। उदाहरण –

'छोड़ द्रुमों की मृदु छाया
तोड़ प्रकृति से जी माया
बाले तेरे बाल जाल कैसे उलझा तु लोचन।'

छायावादियों के अलंकार विधान, बिम्ब विधान और प्रतीक विधान में सर्वत्र प्रकृति का साम्राज्य है।

छायावादोत्तर हिन्दी काव्य में प्रगतिवाद और प्रयोगवाद था नई कविता आदि वादों के विकसित होने पर प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण की ओर कम ध्यान दिया। डॉ0 वासुदेव नंदन प्रसाद जी ने कहा भी है 'प्रगतिवादी काव्य में प्रकृति के उन्मुक्त रूपों का एक तरह से अनादर हुआ है क्योंकि वहाँ प्रकृति से अधिक मानवीय शक्तियों को प्रश्रय दिया गया है। मानव जीवन में फैले वैसभ्य को दूर करना ही उनका मुख्य लक्ष्य था।'

अतः प्रकृति के दर्पण में वे अपनी भावनाओं की छवि प्रतिबिम्बित न कर सकें लेकिन दिनकर, बच्चन, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, शिव मंगल सिंह 'सुमन', नेपाली, त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल और गिरिजा कुमार माथुर आदि की कविताओं में कुछ मनोमुग्धहारी चित्र दृष्टि गोचर होते हैं।

'हरे वन के कण्ठों में कहीं, स्रोत बन जाते उज्ज्वल हार,
.....अगणित फूल।'
– दिनकर

प्रयोगवादी कवियों ने यौन वर्णनाओं के तोड़ने के उद्देश्य से भी प्रकृति का प्रयोग यौन प्रतीकों के रूप में किया है। सामान्यतया प्रयोगवादी काव्य या नयी कविता प्रकृति चित्रों से सर्वथा रहित नहीं है। नये कवियों को प्रकृति का मानवीकरण करने में सफलता प्राप्त हुई है।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का उदाहरण –

'नीम की निमौली पकी, सावन की ऋतु आई रे।
.....बुंदियाँ लाई रे।।'

निष्कर्ष

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हमारी आधुनिकतम् कविता में भी प्रकृति की सर्वथा उपेक्षा नहीं की गयी है। इतना अवश्य है कि पुराने प्राकृतिक उपमानों के स्थान पर नये उपमान खोजे गये है और सौंदर्यबोध का स्तर परिवर्तित हुआ है। इस प्रकार हमारे काव्य साहित्य का प्रारम्भिक काल से लेकर आज तक का इतिहास यहीं सिद्ध करता है कि कविता और प्रकृति दोनों अभिन्न ही हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ॰ द्वारिका प्रसाद – कामायनी में काव्य संस्कृति और दर्शन
2. डॉ॰ बाबूराम त्रिपाठी – निराला काव्य – एक मूल्यांकन
3. डॉ॰ श्री पाल सिंह 'क्षेम' – सुमित्रानंदन पंत की काव्य चेतना
4. डॉ॰ कुमद प्रभा श्रीवास्तव – महोदवी वर्मा की काव्य दृष्टि
5. डॉ॰ एस॰टी॰ नरसिंहा चारी – प्रसाद की सौन्दर्य भावना
6. केदारनाथ कोमल – आज की कविता
7. श्री जयशंकर प्रसाद – झरना, आंसू
8. श्री चन्द्र जैन – काव्य में पादप–पुष्प
9. महादेवी वर्मा – दीपशिखा
10. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' – परिमल
11. डॉ॰ भगीरथ मिश्र – निराला काव्य का अध्ययन
12. डॉ॰ राम कुमार सिंह – आधुनिक हिन्दी काव्य भाषा
13. डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश – पंत जी का नवींन बोध काव्य
14. डॉ॰ विश्वनाथ प्रसाद – धूमिल की काव्य चेतना
15. डॉ॰ जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव – साठोत्तरी कविता
16. सुमित्रानंदन पंत – रश्मि बंध
17. वही
18. हिन्दी साहित्य कोश
19. महादेवी वर्मा – यामा
20. सुमित्रानन्दन पंत – गुंजने